इकाई 19 लिंग-भेद के परिप्रेक्ष्य : प्रारंभिक भारत में स्त्रियाँ*

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 लिंग-भेद के इतिहास को समझने के स्रोत

19.3 लिंग-भेद पर इतिहास लेखन

19.4 प्रारंभिक भारत में महिलाओं की स्थिति

19.5 लिंग-भेद के अध्ययनों का महत्व

19.6 सारांश

19.7 शब्दावली

19.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

19.9 संदर्भ ग्रन्थ

19.0 उद्देश्य

इस इकाई में, आप इनके बारे में सीखेंगे :

- इतिहास को समझने और इसका विश्लेषण करने के लिए एक उपकरण के रूप में लिंग भेद;
- प्रारंभिक भारत के संदर्भ में लिंग-भेदी इतिहास लेखन;
- लिंग-भेद आधारित इतिहास को समझने के लिए महत्वपूर्ण स्रोत; और
- प्रारंभिक भारत में महिलाओं की झलक।

19.1 प्रस्तावना

चूंकि अधिकांश प्रारंभिक विद्वान, शोधकर्ता और इतिहासकार पुरुष थे, इसलिए समाज के अनेक पहलुओं को इतिहास की किताबों में जगह नहीं मिली। उदाहरण के तौर पर, बच्चे का जन्म, मासिक धर्म, महिलाओं के कार्य, लिंग-भेद से परे के लोग (ट्रांसजेंडर) पारिवारिक जीवन आदि का अधिक उल्लेख नहीं किया गया है। अतीत की एक समग्र तस्वीर प्रस्तुत करने के बजाए कुछ चुनिंदा पहलु जैसे कि राज्य-व्यवस्था और पुरुषों की अलग-अलग भूमिकाएं इतिहास लेखन के केन्द्र बिन्दु बन गए। महिलाएं, इन किताबों के अध्यामों में एक हासिये तक सीमित थी जहाँ एक दो अनुच्छेद महिलाओं की स्थिति और ओहदे पर समर्पित थे। यहाँ तक कि इन अनुच्छेदों के विवरण भी शायद ही एक-दूसरे से अलग थे। इससे ऐसा लगता था कि जैसे इतिहास (और उसी तरह समाज, राजनीति, अर्थव्यवस्था और सभी संस्कृति) पुरुषों का था, जबकि महिलाओं का उल्लेख केवल अलग से एक छोटी गतिहीन इकाई के रूप में किया जाता था। बेशक, कुछ अपवाद भी थे, लेकिन ये हालांकि दुर्लभ थे। इस अभ्यास को अब ठीक किया जा रहा है और महिलाओं की भूमिका और उपस्थिति को ऐतिहासिक सवालों के सभी भागों में पढ़ा जा रहा है।

* उपासना धनकड़, फाउंडर एन्ड सी. ई. ओ. ऑफ मेलोड़ी पाइपर सर्विसिस प्राइवेट लिमिटिड गुड़गाँव।

इस इकाई में हम प्रारंभिक भारतीय इतिहास के अध्ययन में लैंगिक परिप्रेक्ष्य के उपयोग और विकास के बारे में और अधिक जानेंगे। लैंगिक इतिहास महिलाओं, पुरुषों और अन्य लिंग आधारित पहचानों को एक ऐतिहासिक संदर्भ में देखता है और सांस्कृतिक विचारों और संस्थाओं को प्रभावित करने के तरीके की व्याख्या करते हुए यह समझने की कोशिश भी करता है कि इतिहास किस प्रकार लैंगिक भूमिकाओं से प्रभावित होता है।

19.2 लिंग-भेद के इतिहास को समझने के स्रोत

स्रोत इतिहास लेखन के आधार हैं। पूर्व-ऐतिहासिक सरल औजारों से लेकर दुर्बोध ग्रन्थों तक, सब कुछ का उपयोग इतिहास में महिलाओं के जीवन और भूमिकाओं को समझने के लिए किया जा सकता है। स्रोतों में स्त्रियों की उपस्थिति के साथ-साथ उनकी गैर-मौजूदगी पर भी ध्यान देने की ज़रूरत है और विवेचन और तर्क करके ही कोई सिद्धांत बनाया जा सकता है। महिलाओं के जीवन से संबंधित कुछ वस्तुएँ या स्त्री सिद्धान्त के विचार का चित्रण, इनका प्रमुख महत्व है। इसमें यह सब शामिल होंगी – स्त्रियों की लघुमुर्त्तियों, कला वस्तुएं, महिलाओं द्वारा लिखित और संकलित ग्रन्थ, महिलाओं द्वारा बनाए गए स्मारक या उनके लिए बनाए गए स्मारक, उनके जीवन से संबंधित वस्तुएँ, महिलाओं की सांस्कृतिक भूमिका के आधार पर उनसे जुड़ी वस्तुएँ; और यह इन सब वस्तुओं तक भी सीमित नहीं है।

यह महत्वपूर्ण है कि स्रोतों को राजनीतिक संरचनाओं, सामाजिक परिस्थितियों, आर्थिक गतिविधियों और उस समय के अन्य विभिन्न विचारों और संस्थाओं के संदर्भ में समझा जाना चाहिए। इसके अलावा, हमें स्थानीक संदर्भ और शब्दार्थ परिवर्तन, जो एक ग्रन्थ में समय के साथ आते हैं, के प्रति संवेदनशील होने की आवश्यकता है। ग्रन्थों की सीमाएं हैं। लैंगिक इतिहास को समझने के लिए इनका आलोचनात्मक अध्ययन करने की ज़रूरत है। उमा चक्रवर्ती द्वारा यह उचित ही संकेत दिया गया है कि प्रारंभिक चरण में लिखा गया अधिकांश लैंगिक इतिहास 'ऊपर से एक पक्षपात पूर्ण नजरिया' था। इसने चुनिंदा पाठय स्रोतों का अनुकरण किया और महिलाओं की संबंधपरक पहचान पर ध्यान केन्द्रित किया, हालांकि, कुछ अपवाद थे।

मानव विज्ञान, कला इतिहास, नृवंश विज्ञान, साहित्यिक अध्ययन और अन्य विषयों के स्रोतों और विधियों को शामिल करने वाले अन्र्त-अनुशासनात्मक शोध समग्र इतिहास और लैंगिक भूमिकाओं को उजागर कर सकते हैं।

19.3 लिंग-भेद पर इतिहास लेखन

बिट्रिश औपनिवेशिक शासकों द्वारा भारतीय सभ्यता और संस्कृति को कलंकित करने के लिए प्रचारित अनेक वृत्तांतों के बीच, भारतीय महिलाओं की स्थिति एक केन्द्रीय बिन्दु बन गई। महिलाओं के जीवन को दयनीय बनाने वाली विभिन्न सामाजिक बुराईयों को इंगित किया गया और 'सुधारों' को शुरू करने का भी प्रयास किया गया। सती, बाल-विवाह, अधिरोपित विधवापन, बहु-विवाह, दहेज, शैक्षणिक और आर्थिक असमानता, पर्दा (*घूघंट*) और कई अन्य प्रथाओं ने औपनिवेशिक काल के दौरान महिलाओं के जीवन को कठिन और दयनीय बना दिया था। कुछ प्रथाएं उच्च सामाजिक और आर्थिक परिवारों की महिलाओं को प्रभावित करती थी जबकि अन्य ने गरीब महिलाओं की दुर्गति की। इन मुद्दों को हल करने के लिए 19वीं शताब्दी में कई सामाजिक सुधार आन्दोलन शुरू किये गये थे और भारतीय सुधारकों और बिट्रिश अधिकारियों के साथ-साथ इनमें अन्य यूरोप के लोगों द्वारा योगदान

दिया गया था। महिलाओं की स्थिति के सुधार की दिशा में ये प्रयास एक महत्वपूर्ण और स्वागत योग्य बदलाव थे।

महिलाओं की स्थिति को राष्ट्र-निर्माण और राष्ट्रीय चरित्र के संलाप में एक आधार-भूत स्थान प्राप्त हुआ। महिलाओं की स्थिति का विवादास्पद मुद्दा विविध प्रकार के इतिहासकारों के लिए एक प्रतीकात्मक युद्ध का मैदान बन गया। उनका या तो राष्ट्रवादियों द्वारा बचाव किया जाना था या उन्हें ब्रिटिश या भारतीय सुधारकों द्वारा सुधार किया जाना था। *भारत में महिलाओं को एक समरूप श्रेणी के रूप में माना जाने लगा और उनके बारे में अत्यधिक सामान्यीकरण प्रतिमान बन गया*। जबकि भारत में कई समुदायों ने विधवा पुर्नविवाह का अभ्यास किया था और सती प्रथा का अभ्यास नहीं किया और जबकि कुछ समुदायों ने विवाह-विच्छेद या प्रथक्कन का अभ्यास किया। भारतीय स्त्री की छवि, जिसको स्त्री, पत्नी और विधवा के रूप में नियंत्रित किया गया था वह छवि इतिहास लेखन में एक प्रमुख विषय बन गई।

दूसरे, *पश्चिमी दृष्टि को गैर-पश्चिमी समाजों को समझने के लिए इस्तेमाल किया गया इसलिए व्याख्याएँ संदर्भ से दूर हटकर थी*। उदाहरण के लिए, *स्त्री-धन* को दहेज के समान माना गया था और महिलाओं द्वारा इसके उपयोग और स्वामित्व के प्रावधानों पर बहुत कम ध्यान दिया गया था। परिवार के आभुषणों की बिक्री (स्त्री-धन के मुख्य घटकों में से एक) से जुड़े बड़े सामाजिक कलंक पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इसी प्रकार, महिलाओं की संपति को हड़पे जाने पर प्राचीन ग्रन्थों द्वारा सूचीबद्ध दंडात्मक प्रावधानों पर भी ध्यान नहीं दिया गया। स्वतन्त्रता से बहुत पहले पश्चिमी विद्वानों द्वारा विशेष खंडों में धर्म और समाज पर लिखना या हिन्दु कानून में महिलाओं की स्थिति का आंकलन करना शुरू कर दिया था, हालाँकि उनमें से अनेकों ने एक बार भी भारत का दौरा नहीं किया था। इस बिन्दु को स्पष्ट करने के लिए, आइए हम *मनुस्मृति* का उदाहरण ले। यह ग्रन्थ धर्मशास्त्र परंपरा से आता है और स्पष्ट रूप से कहता है कि इसकी व्याख्या मीमांसा के संदर्भ में की जानी जाहिए। और फिर भी, इस तरह का अभ्यास कभी नहीं किया गया था। ग्रन्थ के चुनिंदा छंदों का उपयोग विद्वानों और शोधकत्ताओं द्वारा अपनी पंसद के अनुसार एक विशेष छवि बनाने के लिए किया गया था।

तीसरा, *एकरेखीय व्याख्याओं ने न केवल भारतीय महिलाओं की एक अखंड (समरूप) तस्वीर बनाई, बल्कि इस छवि को अतीत की सदियों और सहस्त्राब्दियों तक पीछे खींच दिया*। जहाँ तक कि इतिहास के स्रोत कुछ ही थे और इतिहास का विषय अपने आरंभिक अवस्था में था, तब भी भारत के इतिहास और संस्कृति को समझने के बारे में लम्बे-लम्बे दावे किये गये थे। केवल कुछ ही ग्रन्थों का अनुवाद किया गया था, और उन्हें पूरा इतिहास को समझने का आधार बनाया जा रहा था। महिलाओं पर रचनाएँ चयनात्मक पाठ्य सामग्री पर आधारित थी। भारतीय महिलाओं का इतिहास होने का दावा करने वाली एक अकेली अपूर्व और एक समान विलक्षण कथा समस्यात्मक है।

एक बड़े संदर्भ में, मानव जाति के विकास पर शोध दिखाता है कि लिंग-तटस्थ शब्दावली का उपयोग नहीं किया गया था, उदाहरण के लिए, 'मनुष्यता' (Human kind) के स्थान पर 'आदमजात' (Mankind) शब्द का उपयोग, संग्रहण के स्थान पर आखेट को विशेष मानना, एक इस तरह की मानसिकता को दर्शाता है जो पुरुष को अस्तित्व के केन्द्र में रखती है। हालाँकि अध्ययन दिखाते हैं कि शिकार आहार का केवल 35 प्रतिशत भाग होता था, जबकि फलों और अन्य खाद्य पदार्थों का संग्रहण बाकी प्रमुख भाग की आपूर्ति करता था। खाद्य संसाधनों का संग्रहण सामान्यतः महिलाओं द्वारा किया जाता था। चूंकि संग्रहण एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी, जिसका महत्व शिकार के लिए आखेट से अधिक था, इसलिए यह

महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को इंगित कर सकता है। पुरुष पूर्वाग्रह इतना मजबूत था कि बिना किसी वैधानिक या प्रमाण के आनुमानिक परिकल्पनाएँ पेश की गई। उदाहरण के लिए, डेविड़ क्लार्क ने ग्लेस्टोनबरी की बस्तियों में प्रमुख और गौण घरों को क्रमशः पुरुषों और महिलाओं के साथ सम्बन्धित करके देखा, यह केवल इस धारणा पर आधारित था कि महिलाएं केवल घरेलू दैनिक कामकाज तक ही सीमित थी।

अब यह महसूस किया जाने लगा है कि न केवल पुरा-पाषाण आखेट में बल्कि 'नव-पाषाण क्रान्ति' में भी महिलाओं का बहुत योगदान था। जबकि प्रागैतिहासिक काल के लैंगिक अध्ययन बहुत कम हैं, हमारे पास आद्य-ऐतिहासिक चरण से मिलने वाली भौतिक सामग्री अधिक है। हड़प्पा सभ्यता के बारे में लैंगिक समझ का निर्माण किया जा रहा है और इस संबंध में विभिन्न पुरातात्विक अवशेषों का अध्ययन किया गया है। विभिन्न स्थलों से महिला लघुमूत्तियों, गर्भवती महिलाओं की मूत्तियों, नाचने वाली लड़की की मूर्ति, विभिन्न प्रकार के आभूषण और व्यक्तिगत सामान जिनकी खोज की गई है, वह महिला और पुरुषों के सार्वजनिक और निजी-जीवन पर उपयोगी अन्तर्दृष्टि प्रदान करते हैं। मोहनजोदड़ों से प्राप्त एक युवती की मूर्ति को बाद के समय में देवदासियों की संस्था के बारे में जानकारी होने के आधार पर 'डासिंग गर्ल' कहा गया है। इस तरह के पश्चवर्ति स्पष्टीकरण समस्याग्रस्त हैं। दीक्षा भारद्वाज ने भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिम भागों से प्राप्त एक विशाल और विविध परिमाण में प्राप्त महिला लघु मूत्तियों के आधार पर, एक विस्तष्व इतिहास जिस पर काम किया जा सकता था उसकी उपेक्षा के बारे में प्रासंगिक सवाल उठाये हैं। उनके विस्तृत प्रसंगों पर ध्यान देते हुए उन्होंने उर्वरता और प्रजनन को प्रच्छन द्वेष-भाव या बिलैयान्पन से जोड़ा है। वह श्रम साध्य तरीके से उन विभिन्न प्रक्रियाओं और उद्देश्य को सामने लाती हैं जिन्हें बेहतर तरीके से समझा जा सकता है अगर एक लैंगिक नजरिये से उनका विश्लेषण किया जाए। अब तक इन लघु-मूत्तियों को सरलीकृत तरीके से उर्वरता और दिव्यता से जोड़ा गया था।

टेराकोटा (पकी मिट्टी की मूर्तियां) की महिला लघु आकृतियों की एक विस्तृत विविधता है जो पूर्व हड़प्पा काल से ही विभिन्न स्थलों से प्राप्त हुई है। इन स्त्री आकृतियों में बच्चे को दूध पिलाते, बर्तन पकड़े हुए, आटा गूथनें, शिशुओं को पालते, ड्रम जैसी वस्तुएँ ले जाते हुए, बोर्ड गेम के लिए बैठे हुए, *सटिटोपेजिया* (कुल्हों और अन्य अंगों पर वसा के जमाव के साथ) पुष्प के साथ शीर्ष परिधान के साथ और अनेक अन्य रूपों में आकृतियों मिली हैं। यहाँ तक कि गर्भवती महिलाओं की लघुमूर्त्तियों भी काफ़ी आम हैं। हालाँकि, इनमें से अधिकांश को बिना आलोचनात्मक मूल्याँकन के प्रजनन, धार्मिकता और प्रजनन विचारों से जुड़ा हुआ मानकर मातृदेवी का निरूपण मान लिया गया है। जहाँ उनमें से कुछ मन्नत या व्रत की वस्तुएँ थी, अन्य को खिलौने या अन्य उपयोगिता की वस्तुएँ माना जाता है।

महिला रूप पर ध्यान रखना इतना घिसा-पिटा रहा है कि महिलाओं को केवल घर, चुल्हा, प्रजनन, लैंगिकता और दिव्यता के साथ जोड़ा गया है। यहाँ तक कि कभी-कभी कल्पित स्त्री भूमिकाओं में पुरुष आकृतियों को भी महिला लघु रूप में वर्गीकृत किया जाता था।

बोध प्रश्न 1

1) प्रारंभिक भारत में लिंग-भेद को समझने के लिए विभिन्न प्रकार के स्रोत क्या हैं?

....

....

....

2) ब्रिटिश औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा महिलाओं पर किये गये अध्ययनों के क्या परिणाम थे?

....

....

....

....

....

19.4 प्रारंभिक भारत में महिलाओं की स्थिति

भारतीय उप-महाद्वीप में पहली साहित्यिक पंरपरा वैदिक ग्रन्थ संग्रह (और दुनियाँ में सबसे प्राचीन) की है। चार संहिताओं से लेकर *उपनिषदों* तक, हमें विभिन्न भूमिकाओं में महिलाओं के अनेक दिलचस्प संदर्भ मिलते हैं। इन महिलाओं में से कुछ ने आज की सांस्कृतिक विरासत पर अपनी छाप छोड़ी है और उन्हें विभिन्न अनुष्ठानों और सामाजिक संदर्भों में याद किया जाता है। उनके नाम, कहानियाँ, कुछ अत्यधिक श्रद्वेय स्तुतियों और कुछ अन्य दिलचस्प पहलुओं का उल्लेख वैदिक कोष में किया गया है। महिलाओं को ना केवल सामाजिक भूमिकाओं के सन्दर्भ में बल्कि अनेक महत्वपूर्ण स्तुतियों के प्रर्वतकों के रूप में जाना जाता है। वैदिक कोष में न केवल स्त्रियोचित और पुर्ल्लिंग बल्कि विभिन्न नपुंसक पात्रों और श्रेणियों की पहचान की जा सकती है।

वैदिक साहित्य को प्रारंभिक वैदिक और उत्तर वैदिक के रूप में वर्गीकृत किया गया है। ऋग्वेदिक समाज और राजनैतिक व्यवस्था जीवन से परिपूर्ण दिखाई पड़ती है और कृषि-चरागाही अर्थव्यवस्था घनिष्ट नातेदारी सम्बन्धों पर आधारित थी। महिलाओं के साथ-साथ पुरुषों ने भी समाज, अर्थव्यवस्था और राजनैतिक व्यवस्था में भाग लिया। गायत्री मन्त्र सहित कुछ सबसे श्रद्वेय स्तुतियाँ का श्रेय महिलाओं को दिया गया है। विभिन्न प्राकृतिक घटनाओं को देवियों के रूप में चित्रित किया गया है और उन्हें प्रार्थनाएँ प्रस्तुत की जाती हैं। जबकि संख्यात्मक विश्लेषण में इन्द्र, अग्नि, वरूण और अन्य कुछ देवताओं की प्रधानता विशिष्ट रूप से दर्शाई गई है, लेकिन देवियों की शक्ति और महत्ता समान रूप से सुस्थापित हैं।

न केवल दिव्यता के संदर्भ में, बल्कि लौकिक दुनियाँ के विवरणों में भी महिलाओं को अपने जीवन के बारे में स्वयं के चुनाव करने और निर्णय लेने वाले निकायों में हिस्सेदारी करते हुए देखते हैं। महिलाओं ने तीनों वैदिक/सामाजिक, राजनैतिक सभाओं में भागीदारी की अर्थात् *सभा, स्मीति* और *विधाता* में। उनकी शिक्षा तक पहुँच थी और वे ज्ञान सर्जन में भी सलंग्न थी। वे विवाह के साथ या उसके बिना *ब्रह्मवादिनी* होने का चुनाव कर सकती थी। इसलिए यह मानने का कोई कारण नहीं है कि वे केवल घर और चुल्हे तक सीमित थी।

इतिहासकार उमा चक्रवर्ती ने प्राचीन भारत में पितृ-सत्ता के अपने वर्णन में जाति को आवश्यक मानकर पितृ-सत्ता के चिन्हों के लिए प्रारंभिक भारतीय इतिहास की जाँच पड़ताल की है। वह जिस पारिभाषिक शब्द का उपयोग करती हैं, वह हैः 'ब्राह्मणवादी पितृ-सत्ता'। *धर्म-शास्त्रों* (*मनुस्मृति* सहित) जैसे प्राचीन ग्रन्थों, साथ ही साथ बाद के बौद्ध स्रोतों को देखते हुए, चक्रवर्ती लगभग 1000 बी. सी. ई. से प्रारंभिक भारतीय समाज का पुनर्निर्माण करती हैं। सामाजिक संगठन को इन ग्रन्थों के माध्यम से, यह दिखाने के लिए कि पुरुषों द्वारा महिलाओं का जाति और वर्ग पदानुक्रम और अन्तरों के निर्माण के माध्यम से कैसे

नियन्त्रण किया गया था, उस प्रक्रिया को पुनर्निर्मित किया है। स्त्रियाँ पुरुषों के अधीनस्थ थी। उनके व्यवहार, प्रजनन और लैंगिकता को पुरुषों द्वारा नियंत्रित और संरक्षित किया गया था। इसके अलावा, महिलाओं को पुरुषों की निजी संपत्ति के रूप में देखा जाता था, जिनका अपना कोई अस्तित्व नहीं था। पुत्रों की मनोकामना की जाती थी और पुत्र के जन्म का उत्सव मनाया जाता था। ब्राह्मणवादी ग्रन्थों में बताया गया है कि महिलाओं की आर्थिक संसाधनों तक कोई पहुँच नहीं थी। एक स्त्री को केवल प्रजनन में उसकी भूमिका के लिए महत्व दिया गया था।

उपर्युक्त अंश से यह स्पष्ट है कि *मनुस्मृति* जैसे ग्रन्थ महिलाओं की इस तरह की तस्वीर चित्रित करते हैं जिनके पास कोई अधिकार नहीं था और जो अधीनता की स्थिति में थी। टी. एस. रूक्मणी ने हालाँकि यह समझने का प्रयास किया की क्या महिलाओं का कोई अभिकर्तत्व (एजेंसी) प्रारंभिक भारत में था या नहीं? उनके शोध कार्य ने अनेक दिलचस्प विवरणों को उजागर किया है। लेखिका इस तथ्य को स्वीकार करती हैं कि यद्यपि पितृ-सत्तात्मक व्यवस्था ने महिलाओं को क्षति पहुंचाई, लेकिन ऐसे उदाहरण है जिनमें महिलाओं ने अपनी स्वतंत्रता जाहिर करने के लिए अपना स्थान बनाया। वह बताती हैं कि यद्यपि *कल्पसूत्र* (*श्रौत सूत्र, धर्म सूत्र, गृह सूत्र*) जैसे ग्रन्थ धर्म की विचारधारा के इर्द-गिर्द घुमते थे और वैकल्पिक विचारों को व्यक्त करने के लिए ज्यादा जगह नहीं थी, फिर भी ये रचनाएं बदली हुई परिस्थितियों को दर्शाते हुए, विचारों को व्यक्त करने के लिए कुछ अपमार्ग तलाशे हैं। उदाहरण के लिए, *आपस्तम्ब धर्मसूत्र* में एक कथन है कि व्यक्ति को अन्तिम संस्कार में स्त्रियों की राय का अनुगमन करना चाहिए। स्टेफनी जैमिसन का मानना है कि आतिथ्य और विनिमय संबंधों में महिलाओं ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वह कहती हैं कि सोम की बलि का सफलतापूर्व समापन होने में पत्नी की स्वीकृति महत्वपूर्ण थी। एक अन्य अध्ययन में यह दिखाया गया है कि महिलाओं को यह निर्णय लेने का अधिकार था कि एक बलि में ब्रह्मचारिणी या सन्यासिन को भिक्षा में क्या दिया जाए। इन परिस्थितियों में उसे क्या करना है, यह बताने का पुरुषों को कोई अधिकार नहीं था।

वैदिक समाज वह था जिसमें विवाह का अत्यधिक महत्व था। इस तरह के संदर्भो में, यदि कोई महिला विवाह नहीं करना चाहती थी, तो स्वभाव के विरूद्ध जाकर अविवाहित रहने का निर्णय करना उसके स्वयं के चुनाव को इंगित करेगा। यहाँ गार्गी का उल्लेख हो सकता है। वह स्तुतियों की रचयिता थी और उन्हें ब्रह्मवादिनी कहा जाता है (रूक्मणी, 2009)।

यह शब्द उस महिला पर लागू होता है, जो स्तुतियों की रचयिता थी और जिसने अविवाहित रहने का चुनाव करके स्वयं को शिक्षा के लक्ष्य के लिए समर्पित किया। इसी तरह, मैत्रेयी के मामले में, वह जानबूझवार *उपनिषदों* की विद्या में शिक्षित होने का चयन करती है और याज्ञवलक्य उसे अपने चयन के विरूद्ध सलाह नहीं देते। ऋग्वेद 111, 55.16 में कहा गया है कि विज्ञ और शिक्षित पुत्रियों को शिक्षित वर के साथ विवाह करना चाहिए। यह दर्शाता है कि विवाह में स्त्रियों की अपनी राय मानी जाती थी। *ऋग्वेद* में एक मन्त्र है जिसके सस्वर पाठ से विज्ञ पुत्री का जन्म सुनिश्चित होता है।

आल्तेकर सीता यज्ञ, रूद्र यज्ञ आदि का उल्लेख करते हैं जो विशेष रूप से महिलाओं द्वारा किये जाते थे। कुछ महिलाओं को उनकी असाधारण सामर्थ्य के लिए जाना जाता था। उदाहरण के लिए *ऋग्वेद* संहिता में हमें अपाला, घोषा, लोपमुद्रा, गार्गी, मैत्रेयी, शचि-विशुवारा अत्रि, सुलभ और अन्य महिलाओं का उल्लेख मिलता है। महिलाओं की न केवल स्वतंत्र व्यक्तियों के रूप से प्रशंसा की गई है बल्कि उनके जन्म संबंधी या वैवाहिक परिवारों के प्रति उनके योगदान के संदर्भ में भी।

उत्तर वैदिक साहित्य समाज और राजनैतिक व्यवस्था में हो रहे परिवर्तन के साथ एक राज्य समाज की तरफ़ प्रगति को दिखाता है। अब मुखिया को *गोपति* के स्थान पर *भू-पति* कहा जाने लगा था। हालाँकि उल्लेखित बारह महत्वपूर्ण पदों (रतनियों) में प्रमुख रानी महिषी विशेष स्थान रखती हैं। मुख्य रानी का महत्व महाकाव्यों, *अर्थशास्त्र* और यहाँ तक कि प्रारंभिक ऐतिहासिक काल के सिक्कों और अभिलेखों के अनेक संदर्भों को देखने से पता लगता है, कायम रहा। अन्य संहिताओं में ज्ञानी स्त्री जैसे *ऋषिका* का सन्दर्भ मिलता है। पत्नी को सहधर्मिनी भी कहा जाता है। *ब्राह्मण* या ऐसे ग्रन्थ जो यज्ञ के आयोजन से संबंधित हैं (वैदिक अनुष्ठान), यह उल्लेख करते हैं कि एक व्यक्ति द्वारा अनुष्ठान करने में सक्षम होने के लिए पत्नी के साथ की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, *ऐतरेय ब्राह्मण* पत्नी को पति की आध्यात्मिक पूर्णता के लिए आवश्यक मानता है। हालाँकि, कुछ समस्याजनक संस्थाओं का भी उल्लेख है। उमा चक्रवर्ती ने वैदिक दासियों (महिला सेवक/दास) की स्थिति की ओर संकेत किया जिनको अनेकों उदाहरणों में संदर्भित किया जाता है। वे दान (भेंट/उपहार) और दक्षिणा (शुल्क) की वस्तुएँ थी। क्या महिलाओं को संपत्ति के रूप में संपत्ति की एक वस्तु माना जाता था या नहीं, यह पासे के खेल में द्रौपदी दाँव पर लगाने के उदाहरण के सन्दर्भ में, आगे शोध का विषय है।

आमतौर पर यह माना जाता है कि वैदिक काल के बाद से महिलाओं की स्थिति बिगड़ती चली गई। हालाँकि, पाणिनी की *अष्टाध्यायी* और उसके बाद के व्याकरणिक साहित्य में महिला आचार्यों और उपाध्यायों की प्रशंसा की गई है। इस प्रकार, एक *ब्रह्मवादिनी* वैदिक काल के बाद भी अहम् भूमिका निभाती रही है। *रामायण, महाभारत* और यहाँ तक कि *पुराणों* ने भी *ब्रह्मवादिनी* को जीवित रखा। यहाँ अनुसूया, कुन्ती, दमयन्ती, द्रौपदी, गांधारी, रूकमणी का जिक्र हो सकता है जिन्होंने कवियों की कल्पना को जीवित रखा। ग्रन्थ दिखाते है कि कुनी-गार्गा की पुत्री ने विवाह से इन्कार कर दिया क्योंकि उसने किसी को अपने योग्य नहीं पाया (शाल्य पर्व 52. 3-25)।

महाकाव्य में उन महिलाओं का भी उल्लेख किया गया है जिनसे प्रमुख घटनाओं के सम्बन्ध में सलाह माँगी गई थी। उदाहरण के लिए, तेरह साल के निर्वासन के बाद, अपने भाग की बहाली के सम्बन्ध में भविष्य की कार्यवाही पर विवाद में पांडव कृष्ण के साथ द्रौपदी से उसके विचार पूछते हैं। इसी तरह, जब कृष्ण पांडवों के मामले की पैरवी करने कौरव के दरबार में जाते हैं, तो गांधारी को अपने पुत्रों को समझाने के लिए बुलाया जाता है।

चूंकि सन्यास लेना एक स्त्री के लिए अतिक्रमण की क्रिया थी, ऐसे उदाहरणों के माध्यम से हम महिलाओं की क्रियाशीलता का पता लगा सकते हैं। *रामायण* में शबरी जो ऋषि मंतग की शिष्या थी और जिनकी कुटी पम्पा नदी के किनारे थी, ऐसी ही एक सन्यासिन थी। *स्मृति* साहित्य और *अर्थशास्त्र* में भी ऐसी महिलाओं का उल्लेख मिलता है। महिलाओं को सन्यास की दीक्षा लेने के खिलाफ कौटिल्य का निषेध केवल तभी समझ में आता है जब महिलाएँ सन्यास की दीक्षा ले रही थी। कौटिल्य राजा को जासूस के रूप में महिला परिव्राजकों को रोजगार देने की सलाह देता है। मैगस्थनीज़ उन महिलाओं का उल्लेख करता है जो अपने पति के साथ वन की ओर जाती थी, संभवतः वह वानप्रस्थ अवस्था का जिक्र करता है।

उत्तर वैदिक काल में साहित्य की एक ओर श्रेणी जिनको शास्त्र कहा जाता था, जिसमें *सूत्र* (सूक्ति) शामिल हैं और *स्मृति* ग्रन्थ (जिसे याद किया जाता है), महत्वपूर्ण हो जाते हैं। ये पाठ्य परंपरायें जीवन के चार लक्ष्यों से संबंधित अनेक विषयों से संबंधित हैं। ये चार लक्ष्य पुरुषार्थ (धर्म-कर्म, काम-मोक्ष) हैं। इन सब ग्रन्थों में हमें महिला और पुरुष दोनों के लिए बहुत उदार मूल्य और स्वतंत्रता मिलती है।

एक परिवार की स्थापना को पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं के लिए भी एक आदर्श के रूप में देखा जाता है (हालांकि शिक्षा के लिए तपश्चर्या की दोनों के लिए समान रूप से प्रशंसा की जाती है)। उदाहरण के लिए, *आपस्तम्ब सूत्र* यह बताता है कि एक अविवाहित पुरुष के द्वारा किये गये अनुष्ठानों से देवता खुश नहीं होते हैं। इसी तरह, *मनुस्मृति* में यह प्रावधान है कि यौन-आरंभ के तीन साल बाद तक लड़की इन्तजार करेगी और उस समय के बाद वह अपने लिए एक समान सामाजिक स्थिति का पति ढूंढ सकती है। यदि कोई अविवाहित महिला स्वयं अपना पति ढूंढ लेती है, तो उसे कोई पाप नहीं लगता है और ना ही उस पुरुष को जिसे उसने ढूंढा है (*मनुस्मृति* IXI 190-91)। इस प्रकार, हम देखते हैं कि महिलाओं को विवाह के मामलों में चुनाव की स्वतंत्रता थी। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि अविवाहित पुत्रियों की देखरेख पिता द्वारा की जानी थी। वास्तव में, पुत्री को अत्यन्त स्नेह की वस्तु कहा जाता है (*मनुस्मृति* IV 185)। अगर एक कन्या अपने माता-पिता को खो दे, तो उसकी आर्थिक हितों की अच्छी तरह से देखभाल की जाती थी। यह प्रावधान रखा गया कि अपनी सम्पत्ति के भाग में से उसके भाईयों द्वारा व्यक्तिगत तौर पर अविवाहित लड़कियों को प्रत्येक के हिस्से से एक चौथाई दिया जाएगा। जो देने के लिए तैयार नहीं होंगे उन्हें जाति से बहिष्कृत माना जाएगा (*मनुस्मृति* IX 118)।

महिलाओं के प्रति समकालीन दृष्टिकोण को परिभाषित करने के सम्बन्ध में, *आपस्तम्ब सूत्र* ने निर्धारित किया कि जब वह मार्ग पर चल रही हो तब सभी को एक महिला के लिए रास्ता बनाना चाहिए। बाद के *धर्म-शास्त्रों* में भी इसी तरह के कथन है। *याज्ञवलक्य स्मृति* में कहा गया है कि 'महिलाएँ पृथ्वी पर सभी दिव्य गुणों का मूर्त रूप है' हालाँकि, कई तरह के प्रावधान हैं जो समस्यामूलक लगते हैं। एक तरफ़ हमारे पास स्त्रियोचित (दिव्य और सांसारिक) और उनके द्वारा निभाई जा रही महत्वपूर्ण भूमिकाओं के प्रति श्रद्धा-भाव है, दूसरी तरफ़ इस तरह के संदेह युक्त प्रावधान हैं कि उन्हें अनुशासित करने के लिए उनकी पिटाई या परित्याग करने का अधिकार दिया जाता था।

वैदिक काल के बाद से छठी शताब्दी बी. सी. ई. के उपरांत महिलाओं के पर्याप्त चित्रण के साथ साहित्यिक परंपराओं के अनेक संदर्भ है। शास्त्रीय संस्कृत, पाली, अर्द्धमगधी और अन्य प्राकृत भाषाओं की इस चरण से एक समृद्ध पाठ्य परंपरा है। भाषाओं की विविधता के साथ-साथ बौद्धिक परंपराओं की विविधता भी दिखाई पड़ती है। न केवल मौखिक परम्पराएँ जारी रहती हैं, बल्कि विभिन्न पुरातात्विक अवशेष भी बरामद किये गये हैं। दिलचस्प बात यह है कि हमारे पास साहित्य का एक पूरा संग्रह है जिसका सम्बन्ध पूरी तरह से उन महिलाओं के साथ बताया गया है जो बौद्ध भिक्षुणी बन गई थी। इन्हें *थेरीगाथा* के रूप में संदर्भित किया जाता है अर्थात् अग्रज भिखुनियों के गीत (बौद्ध महिलाएँ जो संघ में शामिल हुई)।

अर्थशास्त्र हमें उन महिलाओं के बारे में जानकारी देता है जो विभिन्न प्रकार की आर्थिक गतिविधियों में संलग्न थी। वे कुशल और अकुशल दोनों प्रकार की श्रम शक्ति का भाग थी। वे पेशेवर के साथ-साथ गैर-पेशेवर रोजगार में भी थी। उनके कुछ व्यवसाय उनके लिंग से संबंधित थे, जबकि अन्य नहीं थे। महिलाएँ राजकीय कर्मचारियों के साथ-साथ स्वतन्त्र कामकाजी महिलाएँ भी थी। इसी तरह, उनमें से कुछ उन गतिविधियों में लगी थी, जो हालाँकि उनकी जैविक संरचना पर निर्भर नहीं थी, लेकिन फिर भी उन्हें महिलाओं के क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया जाता था जैसे घरेलू सेवाएँ। उनमें से कुछ वास्तविक राजकीय कर्मचारी थी, जबकि कुछ अन्य के राज्य के साथ समझौते के तौर पर संबंध थे। उदाहरण के लिए, महिलाएँ राजकीय रोजगार में अंगरक्षक और जासूसों के रूप में कार्यरत थी। जयसवाल सुझाव देते हैं कि शायद ये महिलाएँ भील या कीरट जन-जाति से आई होगीं। महिला जासूसों को ना केवल जानकारी इकट्ठा करने और उसे उचित स्रोत तक पहुँचाने के

लिए रखा जाता था, बल्कि हत्याओं को अंजाम देने के लिए भी। हालाँकि ग्रन्थ पर गंभीरता से नज़र डालने से पता चलता है कि विभिन्न उद्देश्यों के लिए विभिन्न महिला जासूसों को इस्तेमाल किया जाता था। अन्य के अलावा जो महिलाएँ कलाओं में दक्ष थी उन्हें उनके घरों के अन्दर रहने वाले जासूसों के रूप में काम दिया जाता था (कौटिल्य *अर्थशास्त्र* I.12.21)। अन्य को हत्यारों के रूप में काम करना पड़ता था (कौटिल्य *अर्थ शास्त्र* V.19, XII.5.48)। कुछ को लालची शत्रुओं को मुग्ध करने के लिए युवा और सुन्दर विधवाओं की भूमिका दी जाती थी (कौटिल्य *अर्थशास्त्र,* XIII.2.42)। महिला दासियां शाही प्रतिष्ठान और आम परिवारों में कार्यदल का एक महत्वपूर्ण भाग बनी। शाही प्रतिष्ठान में प्रमाणित ईमानदार महिला दासियों को स्नान परिचारक, बाल धोने वाली, बिस्तर तैयार करने वाली, धोबिन और माला बनाने वाली के रूप में काम करने वाले कर्मचारियों के निरक्षण के लिए रखा जाता था (कौटिल्य *अर्थशास्त्र* I.21.13)। इसके अलावा उन्हें कपड़े, पुष्प और अन्य श्रृंगार प्रसाधन पहले स्वयं अपनी आँखों, छाती और बाजुओं में धारण करके उन्हें पेश करना होता था (कौटिल्य *अर्थशास्त्र* XXI.14-15)। इस प्रकार, वे न केवल व्यक्तिगत अनुचर के रूप में काम कर रही थी बल्कि सुरक्षा जाँच के लिए भी काम कर रही थी।

हमारे पास विभिन्न बौद्ध और जैन परम्पराएँ भी हैं जो हमें उस समय के विचारों और संस्थाओं की कुछ झलक देती हैं। रूढ़िवादी (वैदिक और ब्राह्मणवादी) और विधर्मी निर्देशात्मक परंम्परा के अलावा हमारे पास अनेक लोकप्रिय ग्रन्थ जैसे संस्कृत में महाकाव्य और पाली में *जातक* भी हैं। यहाँ तक कि प्राकृत भाषा में भी अनेक वृतान्त और काव्य रचनाएँ हैं। बौद्ध भिक्षुणीयों द्वारा लिखी *थेरी-गाथा* एक दिलचस्प साहित्यिक स्रोत है जो हमें उन विभिन्न महिलाओं की एक झलक प्रदान करता है जिन्होंने अरहन्त की पदवी या उसी प्रकार की अनुभूति की अवस्थाएं प्राप्त की थी। आम्बपाली द्वारा आयु और शरीर के क्षय पर विवेचना, नन्दा, विमला और शुभा आदि द्वारा शारीरिक या इन्द्रिय विषयक आनंदों को कम महत्व देना इसको इंगित करता है कि महिलाऐं बौद्धिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों में उपलब्धियाँ हासिल कर रही थी। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि एक बिल्कुल विपरीत तस्वीर *जातक* द्वारा प्रस्तुत की जाती है जिसमें अक्सर महिलाओं को अशुभ के रूप में दर्शाया गया है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि महिलाओं को पत्नियों या प्रेमिकाओं के रूप में दिखाई जाने वाली भूमिकाओं में एक अमंगलकारी आभा दी गई थी। यद्यपि हमारे पास ऐसे उदाहरण भी हैं जिसमें वह माँ की भूमिका में भी समान रूप से विद्वेशपूर्ण हैं, लेकिन इस तरह के संदर्भ दुर्लभ हैं। एक ही कहानी में हमें महिलाओं पर मढ़ें विभिन्न स्वभावों का संकेत मिलता है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि *जातक* कथाएं स्त्री और पुरुष के बीच के आवेश पूर्ण या स्नेह पूर्ण संबंधों के प्रति विशेष तौर पर पक्षपात पूर्ण हैं। उदाहरण के लिए *सुवन्नाह हंस जातक* कथा हमें एक सोने के पंख वाले पक्षी का विवरण देती है, जो पिछले जन्म की अपनी पत्नी से मिलने आता है ताकि निराश्रित स्थिति में उसकी मदद कर सके। इस कहानी में, लालच के कारण पत्नी अधम काम करती है और पक्षी को टुकड़ों में काट देती है जबकि बेटी ऐसा करने से मना करती है। हालाँकि यहाँ दोष लालच का है, लेकिन हमारे पास कई कहानियाँ है जिनमें व्याभिचार या परगमन को एक बुराई के रूप में विशेष रूप से महिलाओं से जोड़ा गया था। उदाहरण के लिए, कई कहानियों में हमारे पास एक ब्राह्मण की पत्नी की है जो व्याभिचार कर रही है और उसका पाप या तो पालतू जानवरों द्वारा बताया जा रहा है या स्वयं पति द्वारा खोजा जा रहा है। इसलिए यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि इन कहानियों को एक नयी संगठित सामाजिक व्यवस्था में और उसके द्वारा स्त्री और पुरुषों पर लादे गये तकाजे के संदर्भ में प्रासंगिक बनाया जाए। इस तरह के प्रासंगिक कारण और लैंगिक समझ के उपयोग से हमें पाठ्य-रचनाओं से परे ऐतिहासिक प्रक्रियाओं को समझने में मदद मिलेगी।

ग्रन्थों और पुरातात्विक अवशेषों दोनों का अध्ययन विभिन्न विद्वानों द्वारा किया गया है और विरोधी व्याख्याएँ कम नहीं हैं। उदाहरण के लिए, एक तरफ़ सीता (रामायण से) और द्रौपदी (महाभारत से) को पितृ-सत्तात्मक व्यवस्था से पीड़ित के रूप में देखा गया है : दूसरी ओर, उन्हें स्व-इच्छाधारी महिलाओं के रूप में भी दर्शाया गया है। पासे के खेल के बाद द्रौपदी स्वयं को एक बलशाली और मुखर महिला के रूप में प्रस्तुत करती है। यह उसकी वाकपटुता है। अपनी शालीनता पर हमले से उसका क्रोध, कृष्ण के सामने उसके कटु विलाप, युधिष्ठर के प्रति उसके सम्मान की रक्षा करने में असमर्थता के लिए उसके तीखे तेवर और इस प्रकार के अन्य उदाहरणों से पता चलता है कि वह एक आक्रमणशील महिला है। उनका यह व्यक्तित्व कहीं ओर उनके आदर्श पत्नी के रूप में निरूपण के मुकाबले अलग है। हालाँकि द्रौपदी को एक परिपूर्ण पत्नी के रूप में, जो बिना किसी शिकायत के सबसे कठोर परिक्षणों को स्वीकार कर लेती हो, कभी आदर्श स्त्री नहीं समझा गया है। यह सम्मान रामायण में सीता के लिए आरक्षित है। उसे भी द्रौपदी की तरह एक पीड़ित के रूप में प्रस्तुत किया जाता है और वह अपने भाग्य पर चिन्ता व्यक्त करती है हालाँकि, उसकी आक्रमणता उसके स्वयं के अंदर की तरफ़ निर्देशित होती है। जिसका परिणाम पृथ्वी माता से उसके मिलन के रूप में होता है। इस प्रकार न केवल प्राचीन भारत के सामाजिक मानदंड, बल्कि आज भी सीता को एक आदर्श महिला के रूप में महिमामंडित किया जाता हैं, क्योंकि उसने अपने क्रोध और आक्रमणता को सामाजिक रूप से स्वीकार्य मानदंडों के माध्यम से, अपने दुख को अन्दर समेटकर और स्वपीड़न को अपने विरूद्ध इस्तेमाल कर, एक अनुष्ठानिक आत्महत्या के माध्यम से व्यक्त किया। एक महिला की कट्टर आक्रमणता को पितृ-सत्तात्मक समाज में सांस्कृतिक रूप से स्वीकार नहीं किया गया था और इस तरह हम पाते हैं कि पितृ-सत्तात्मक मानदंडों ने तय किया कि महिला के व्यवहार के सन्दर्भ में क्या स्वीकार्य था और क्या नहीं।

क्या वैदिक महिलाओं द्वारा एक सीमित संख्या में स्तुतियाँ उनकी सामान्य स्थिति को प्रदर्शित करती है? क्या देवियाँ केवल चित्रण के लिए हैं जिसका महिलाओं के प्रति विचार और व्यवहार से कोई संबंध नहीं था? क्या केवल राजकुमारियों ने अपने जीवन साथी का चुनाव किया? क्या योद्धा महिलाएँ केवल अपवाद हैं? इस प्रकार के मर्मज्ञ प्रश्नों पर तत्परता से विचार करने की आवश्यकता है। जबकि महिला अध्ययन एक अच्छा विकास है, लेकिन ज्ञान की सीमाओं को विस्तृत करके मानवीय अस्तित्व के अन्य प्रकारों को भी सम्मिलित करने की ज़रूरत है। हमारे पास विभिन्न ग्रन्थों में लैंगिकता की तरलता के वर्तान्त हैं। अर्जुन द्वारा जीवन का एक वर्ष बृहन्नला और अम्बा का शिखंडी के रूप में पुनर्जन्म जैसे कुछ दिलचस्प उदाहरण हैं। शेरी खान तारकई के स्थल पर पाई जाने वाली कलाकृतियाँ में दृश्यमान रूप से अभयलिंगी लघुमूर्तियां शामिल हैं। स्त्रियोचित, पोरूषता, नपुसंकता और लैंगिकता की पहचान के अन्य रूपों की धारणाओं को समझने की आवश्यकता है। इससे हमें संयुग्मता, परिवार, समुदाय और यहाँ तक कि राज्य व्यवस्था और आध्यात्मिकता के विचारों को समझने में मदद मिलेगी।

इस इकाई में वर्णित स्रोत लगभग 200 बी. सी. ई. तक की अवधि के लिए प्रासंगिक है। यह न तो सम्पूर्ण सूची है और न ही सभी क्षेत्रों के लिए प्रासंगिक है। इनमें से कुछ ग्रन्थों में विभिन्न परतें हैं और कुछ सदियों के बाद भी प्रासंगिक है। इस प्रकार, हम देखते हैं कि सभी स्रोतों का उपयोग लैंगिक इतिहास को समझने के लिए किया जा सकता है। हमने यह भी सीखा कि महिलाओं के इतिहास को समझना समग्र इतिहास को समझने के लिए आवश्यक है।

19.5 लिंग-भेद के अध्ययनों का महत्व

प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति के बारे में व्यापक कथन या सामान्यीकरण समस्या मूलक बन गया है। महिलाओं की स्थिति को समझने के लिए पाठ्य-सामग्री का बारीकी से अध्ययन महत्वपूर्ण है। इसमें विविध तरह के स्वर हैं और व्याख्या का एक एकल प्रतिमान सभी के लिए उपयुक्त नहीं है। इसके अतिरिक्त हमें महिलाओं को पश्चिमी पूर्वाग्रह के अनुरूप पूर्णतः अधीनस्थ और स्वरहीन मानने की भूल से भी बचना चाहिए। सबसे अच्छी रणनीति खंड-खंड करके विश्लेषण करने की है। हमें यह समझना चाहिए कि हिन्दु धर्म, तन्त्र, महिला जैसी व्यापक श्रेणियां एक रूपी नहीं थी।

हमें उन स्वरों को मुखारित करने की ज़रूरत है जो स्वभाव के विरूद्ध थी और जो इसकी एक वैकल्पिक झलक देती हैं कि क्या अभ्यास किया गया था ना कि मानदंड क्या थे। प्रमुख प्रतिमान *मनुस्मृति* द्वारा प्रस्तुत किया गया था कि महिलाओं को जीवन के सभी चरणों में कोई स्वतंत्रता नहीं थी, लेकिन हम अन्य ग्रन्थों में और यहाँ तक कि स्वयं *मनुस्मृति* में ऐसे उदाहरण पाते हैं, जो इस भावना के विपरीत हैं। हमें यह भी जाचँना होगा कि इन विभिन्न ग्रन्थों के लेखक एक अधिक महत्वपूर्ण विचारधारा के साथ काम कर रहे हैं। हालाँकि *स्मृति* साहित्य जैसे ऐसे ग्रन्थ हैं जो न केवल विभिन्न दृष्टिकोणों को पेश करते हैं परन्तु साथ ही साथ लेखक को अपनी नैतिकता को व्यक्त करने की अनुमति देते हैं। जैसे-जैसे समाज बदला, नये विचारों और मूल्यों को सम्मिलित किया गया और हम पाते हैं अनेक प्रश्न अनसुलझे रह गये। हमें इस तनाव की जाँच-पड़ताल की आवश्यकता है। हमें यह जानने की आवश्यकता है कि निर्देशात्मक मानदंड क्या थे और वास्तव में क्या अभ्यास किया जा रहा था। ब्राह्मणवादी ग्रन्थों ने सोच समझकर धर्म की विचारधारा को सुदृढ़ किया है और हमें उनके इन लक्ष्यों के बारे में अवगत होना चाहिए और सब-कुछ शाब्दिक अर्थ के रूप में नहीं लेना चाहिए (रूकमणी, 2009)।

इतिहास में लैंगिक अध्ययन की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। मानव समाज के विकास में महिलाओं की भूमिका को समझने पर सूक्ष्मता से ध्यान देने के साथ इतिहास को देखने से न केवल इतिहास में महिलाओं को स्वयं के लिए एक जगह दुबारा बनाने में योगदान मिला है, बल्कि इससे हमें कई अन्य प्रक्रियाओं को एक नये रोशनी में समझने में मदद मिली है। इसके अलावा, इतिहास में पहले से नजरअंदाज़ किये गये स्वरों को खोजने के प्रयास और चिन्ता ने कई गहरे प्रश्नों और पद्धतिगत विकासों को जन्म दिया है। पहले की रचनाओं में निहित पूर्वाग्रहों को भी पहचान लिया गया है और वस्तुनिष्ट इतिहासलेखन का आदर्श अब नए सिरे से अपनाया जा रहा है।

बोध प्रश्न 2

1) प्रारंभिक भारत में महिलाओं की स्थिति के बारे में कुछ पंक्तियाँ लिखिये।

....

....

....

....

....

....

2) लैंगिक अध्ययनों का क्या महत्व है?

....

....

....

....

....

19.6 सारांश

मानवीय सभ्यताओं को पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं द्वारा बनाया गया था, हालाँकि, इतिहास लेखन में एक बड़ा पुरुष पूर्वाग्रह है। महिलाओं को उनकी स्थिति के सवालों तक सीमित कर दिया गया था, जिनका घरेलू क्षेत्र में उनकी भूमिकाओं के संदर्भ में बड़े पैमाने पर मूल्यांकन किया गया था। शोध में स्त्री को पत्नी और विधवाओं के रूप में, व उनके व्यवहार, अनुष्ठानिक या धार्मिक संदर्भ में उनके स्थान को एक केन्द्रीय बिन्दु बना दिया गया है। इसने उन्हें मुख्यधारा के इतिहास में परिधि पर धकेल दिया। इस पर समय-समय पर विभिन्न विद्वानों द्वारा सवाल उठाए गए और इससे इतिहास की लैंगिक समझ का विकास हुआ। महिलाओं के इतिहास पर ध्यान केन्द्रित करने से उस पद्धति को सुधारने में मदद मिलती है जो महिलाओं को एक अखंड, एकरूपी श्रेणी के रूप में देखती है। लैंगिक इतिहास को लिखने से अतीत की एक ऐसी छवि बनाने में मदद मिली है जो पुष्टिकर और सूक्ष्म भेद करती है।

19.7 शब्दावली

लिंग-भेद : मानवों की भूमिका को जैविक यौनतन्त्र के आधार पर सांस्कृतिक दृष्टिकोण से परिभाषित होता है। यह शारीरिक यौन सम्बन्धी धारणा से अलग है। काम जैविक प्रजनन तन्त्र से संबंधित है। कामुकता से तात्पर्य किसी व्यक्ति की सहचर्या के लिए पंसद से है।

लैंगिक इतिहास : अलग-अलग समय में महिलाओं और पुरुषों के जीवन को आकार देने वाले विभिन्न ऐतिहासिक अध्ययन। यह अब कामुकता के अन्य रूपों और लैंगिक भूमिकाओं की समझ के रूप में विस्तार कर रहा है।

अन्तः प्रतिछेदन्ता (Intersectionality) : लिंग वर्ग और धार्मिक, सामाजिक पहचान चिन्हों (श्रेणीकरण) का पारस्परिक संबंध जो समूहों और व्यक्तियों के जीवन को प्रभावित करता है। यह सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक या अनुष्ठानिक पदानुक्रम में व्यक्ति के लिए आधार या शोषण की एक परस्पर निर्भर प्रणाली बनाती है।

प्रक्षेपण (Interpolation) : प्रक्षेपण साहित्य और विशेष रूप से प्राचीन पांडुलिपियों के सन्दर्भ में कोई प्रविष्टि या ग्रन्थ का भाग जोड़ना है जो मूल लेखक/संकलनकर्त्ता द्वारा नहीं लिखा या संकलित किया गया था।

अर्थ-सम्बन्धी इतिहास (Semantic History) : समय के साथ शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। किसी शब्द के अर्थ और निहितार्थ और उसके उपयोग के इतिहास को अर्थ-सम्बन्धी इतिहास कहा जाता है।

19.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपको उत्तर में विभिन्न साहित्यिक स्रोतों और पुरातात्विक स्रोतों को शामिल करना चाहिए, जिनका उपयोग प्रारंभिक भारत में लिंग भेद को समझने के लिए किया जा सकता है। विवरण के लिए भाग 19.2 देखें।

2) कृपया भाग 19.3 देखें।

बोध प्रश्न 2

1) भाग 19.4 देखें।

2) भाग 19.5 देखें।

19.9 संदर्भ ग्रन्थ

आल्तेकर, ए. एस. (1959). *द पोज़िशन ऑफ विमन इन हिन्दू सिविलाइजेशन.* दिल्लीः मोतीलाल बनारसी दास.

चक्रवर्ती, यू. (2005). *जेन्डरिंग कॉस्ट : थरू ए फेमिनिस्ट लैंस.* पॉपुलर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटिड.

चक्रवर्ती, उमा (1988). बियोंड द आल्तेकरियन पैराडाइम : टूवर्डस ए न्यू अंडरस्टेडिंग ऑफ जेंडर रिलेशन्स इन अरली इंडियन हिस्ट्री. *सोशल साइंटिस्ट*, वाल्यूम 16 न. 8.

धनखड़, उपासना (2015). बियोंड द आइडियल रोल्स एन्ड इग्जाल्टेड़ रिचवेल्स : इकोनोमिक रेगुलेशनस फॉर विमन इन मनुस्मृति. इन रजनी जोशी चौधरी (एड़िटिड) *इमेजिज ऑफ विमेन एन्ड विमेन इम्पॉवरमेन्ट इन इंडियन लिटरेचर.* एस. एल. बी. एस. आर. एस. विद्यापीठ.

होमेर, आई. वी. (2005). *विमेन अंडर प्रिमिटिव बुधिज्म.* कास्मोस पब्लिकेशन.

रॉय, कुमकुम (1994). डिफांइनिंग द हाउस होल्ड : सम आस्पेक्टस ऑफ परीस्क्रप्शन एन्ड प्रेक्टिस इन अरली इंडिया. *सोशल साइटिस्ट*, वाल्यूम 22, नम्बर 1/2.

रूकमणी, टी. एस. (2009). *सीकींग जेन्ड़र वाएस इन संस्कृत टैक्स्ट्स*, एनाल्स ऑफ द भंडारकर ऑरियन्टल रिसर्च इन्सटीटयूट, वाल्यूम 90।